RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल–011/2015-17

ओ३म्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र

वर्ष: 75, अंक : 31 एक प्रति 2 : रुपये

रविवार 14 अक्टूबर, 2018

विक्रमी सम्वत् 2075, सृष्टि सम्वत् 1960853119

दयानन्दाब्द : 194 वार्षिक शुल्क : 100 रुपये

आजीवन शुल्क : 1000 रुपये

दूरभाष : 0181-2292926, 5062726

E-mail: apspunjab2010@gmail.com,

www.aryapratinidhisabha.org

वर्ष–75, अंक : 31, 11-14 अक्टूबर 2018 तदनुसार 28 आश्विन, सम्वत् 2075 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

आत्मसाक्षात्कार करो

ले०–स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

अयं होता प्रथमः पश्यतेममिदं ज्योतिरमृतं मर्त्येषु।
अयं स जज्ञे ध्रुव आ निषत्तोऽमर्त्यस्तन्वा३ वर्धमानः।।

–ऋ० ६।९।४

शब्दार्थ–अयम् = यह [आत्मा] **प्रथमः** = पहला, मुख्य **होता** = होता, दानादान करने वाला है। **इमम्** = इसको **पश्यत** = देखो, साक्षात् करो। **मर्त्येषु** = मरने वालों=शरीर-इन्द्रियादि में **इदम्** = यह **अमृतम्** = अविनाशी, अमृत **ज्योतिः** = ज्योति, प्रकाश है। **अयम्** = यह **सः** = पूर्वोक्त **ध्रुवः** = ध्रुव, अविनश्वर **आ+निषत्त** = स्थित हुआ [गर्भस्थ होकर] **जज्ञे** = जन्मता है और **अमर्त्यः** = अविनाशी **तन्वा** = शरीर द्वारा **वर्धमानः** = बढ़ता रहता है।

व्याख्या–स्त्री-पुरुष जब सन्तान की कामना से परस्पर सङ्गत होते हैं, तो अनेक बार उनका प्रयत्न व्यर्थ जाता है। उसका कारण यह है कि केवल रजोवीर्य के संयोग से ही सन्तान नहीं हो जाया करती। जब तक जीव का संयोग न हो, शरीर बन नहीं पाता। शरीर की वृद्धि आदि सब आत्मा के आश्रित होता है, अतः सबसे पहले आत्मा आता है। यही बात वेद अपनी अपूर्व शैली से बतलाता है–**अयं होता प्रथमः**= यह आत्मा सबसे पहला दाता और प्रतिग्रहीता है। आत्मा शरीर और इन्द्रियों को ग्रहण करता है, अतः प्रतिग्रहीता है और शरीर में वृद्धि-चेष्टा का हेतु होने से दाता है। इन दोनों भावों को वेद के एक शब्द **'होता'** ने प्रकट कर दिया है। वेद का आदेश है–**इमं पश्यत**= इसे देखो, साक्षात् करो। देखने का प्रधान साधन है हृदय और मन का योग। जैसा कि वेद में कहा है–**'पतंगमक्तमसुरस्य मायया हृदा पश्यन्ति मनसा विपश्चितः'** [ऋ० १०।१७७।१]–प्राणप्रद परमेश्वर की कुशलता से शरीर-सम्बन्ध के कारण व्यक्ति हुए आत्मा को पण्डितजन हृदय और मन से जानते हैं। हृदय अर्थात् भक्ति [योग की परिभाषा में ईश्वरप्रणिधान] तथा मन=ज्ञान दोनों मिलें, तो आत्मा के दर्शन हो सकें। यह स्मरण रखना चाहिए कि ईश्वरकृपा के बिना आत्मदर्शन सर्वथा असम्भव है।

इसी मन्त्र में आत्मा का थोड़ा-सा लक्षण भी बताया गया है–**इदं ज्योतिरमृतं मर्त्येषु** = यह मरने वालों में अमर ज्योति है। शरीर विनाशी है। इन्द्रियाँ क्षणभंगुर हैं। एक आत्मा है जो अमर है। तभी तो [ऋ० ६।९।५] में कहा है–**ध्रुवं ज्योतिर्निहितं दृशये कम्**= यह सुखदायी अविनाशी ज्योति दर्शन के लिए शरीर में रखी गई है, अर्थात् मानव-जीवन का एक उद्देश्य आत्मदर्शन है। सब-कुछ जाना और आत्मा को नहीं जाना, तो कुछ भी नहीं जाना। इसका जन्म होता है अर्थात् शरीरादि के साथ सम्बन्ध का होना जन्म है। यह स्वयं तो अजन्मा और अविनाशी है, यह सदा ध्रुव रहता है, अर्थात् मर्त्य देह में रहता हुआ भी आत्मा अमृत है–**'अमर्त्यो मर्त्येना सयोनिः'** [ऋ० १।१६४।३८] = अमृत होता हुआ मर्त्यों= विनाशियों के साथ एक ठिकाने में रहता है। अपने कर्मों के कारण इसका जन्म होता है–**'अपाङ् प्राङेति स्वधया गृभीतः'** [ऋ० १।१६४।३८]–अपनी कर्मशक्ति से पकड़ा हुआ उलटा-सीधा जाता है। कर्मों के कारण सद्गति और दुर्गति होती है, अतः **'पश्यतेमम्'** इसे देखो।

(स्वाध्याय संदोह से साभार)

पयः पृथिव्यां पय ओषधिषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयो धाः।
पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम्।।

–यजु० १८.३६

भावार्थ–हे सबके पालन पोषण कर्ता जगदीश्वर! आप, अपने पुत्र हम सब पर कृपा करें कि आपकी नियम व्यवस्था के अनुसार जहाँ-जहाँ हमारा निवास हो, वहाँ-वहाँ हम अन्नादिकों के पौष्टिक रस से पुष्ट हुए, आपके स्मरण और उपासना में तत्पर रहे। पृथिवी में, द्युलोक वा मध्य लोक में और पूर्व पश्चिमादि सब दिशाओं में रहते, आपकी प्रेमपूर्वक भक्ति, प्रार्थना, उपासना करते हुए सदा आनन्द में रहें।

इन्द्रो विश्वस्य राजति। शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे।।

–यजु० ३६.९

भावार्थ–हे सर्वशक्तिमन् परमेश्वर! आप सब चर और अचर जगतों के राजा और स्वामी हैं। आपकी दिव्य ज्योति से ही सूर्य, चन्द्र, बिजली आदि प्रकाशित हो रहे हैं। आप सब जगतों के प्रकाशक हैं। भगवन्! हमारे सब मनुष्यादि दो पाँव वाले और गौ अश्वादि पशु चार पाँव वाले जो हम पर सदा उपकार कर रहे हैं, जिनका जीवन ही पर-उपकार के लिए है, इसके लिए भी आप सदा सुख और कल्याणकर्ता होवें।

शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये।
शंयोरभि स्त्रवन्तु नः।।

–यजु० ३६.१२

भावार्थ–हे जगदीश्वर ! हम पर आप कृपा करें कि, दिव्य गुण वाले जल आदि पदार्थ, आप्त वक्ता विद्वान् महात्मा लोग, श्रेष्ठ कर्म, ज्ञान और आप ईश्वर हमारे इष्ट कार्यों को सिद्ध करते हुए, हमें शान्तिदायक हों। ये ही हमारा पालन-पोषण करके हम पर सब ओर से शान्ति सुख की वर्षा करने वाले हों।

श्रीमद्भगवद्गीता में कर्म सिद्धांत

ले.-डॉ. निर्मल कौशिक 163 आदर्श नगर, ओल्ड कैंट रोड, फरीदकोट

श्री मद्भगवद्गीता में भले ही हजारों वर्ष पूर्व भगवान श्री कृष्ण द्वारा कर्म-विमुख अर्जुन को दिया गया उपदेश हो तो भी युगीन सन्दर्भ में उसकी उतनी ही उपयोगिता है जितनी उस युग में थी। आज भी पथच्युत और असमंजस में पड़ा हुआ प्रत्येक मानव 'अर्जुन' के ही समान कर्त्तव्य विहीन और निरुत्साहित होकर अपनों के मोहपाश से ग्रसित हो जाता है। तब गीता का सन्देश ही उसका मार्गदर्शन करता है। असमंजस (कि कर्त्तव्यविमूढ़) जैसी स्थिति में मानव को गीता के माध्यम से भगवान कृष्ण कहते है 'सर्वान् धर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।' श्रीमद्-भगवद्गीता को सामान्य जन केवल कर्म प्रेरक ग्रन्थ के रूप में जानता है। गीता केवल कर्म का प्रेरक ग्रन्थ ही नहीं है। इसमें भगवान ने 'कर्म और 'कर्मफल' के महत्त्व को दर्शाते हुए मोक्ष पाने का मार्ग प्रशस्त किया है। कर्म को योग के रूप में बताकर 'योग: कर्मसु कौशलम्' की महत्ता को दर्शाया है।''गीता से जुड़ें पत्रिका'' में डा. बृजेश सिंह कहते है कि श्री कृष्ण ने गीता के उपदेश में मानव को अहंकार से रहित होकर अपने कर्त्तव्य को पूर्ण करने हेतु निर्दिष्ट किया है। कर्म करना अपने वश में है परन्तु फल जगत नियन्ता के अधिकार क्षेत्र में है। मनुष्य अपने सारे कर्म ईश्वर को समर्पित कर दे तो वह मुक्ति के महान सुख का अनुभव कर सकता है। जिस धन, सम्पदा ऐश्वर्य पर मानव अहंकार करता है। वह सब कब विनष्ट हो जाये, इसे कोई नहीं जानता। इस कारण अपना परायापन, छोटे बड़े इत्यादि की संकीर्ण भावना से ऊपर उठने में ही मानव का कल्याण है।''

कर्मो में श्रेष्ठ 'यज्ञ कर्म' को गीता में भगवान कृष्ण ने मानव के लिए अत्यन्त उपयोगी और महत्वपूर्ण बताया है। 'यज्ञ' देवों के लिए सम्मान देने वाले और समाज के लिए उन्नति का मार्ग प्रशस्त करने वाले कल्याणकारी कर्मों की श्रेणी में आते है। 'वैचारिकी' पत्रिका में डा. योगेन्द्र भानु लिखते है यज्ञीय कर्म का तात्पर्य भी हम यहां के भौतिक अर्थ के सन्दर्भ में ही लेंगे अर्थात ऐसे कर्म जो श्रद्धापूर्वक सत्य निष्ठा से देवों का सम्मान करने वाले समाज के हितकारी एवं त्याग की भावना से सम्पादित कर्म ही यज्ञीय कर्म है। ऐसे कर्म करते हुए व्यक्ति कर्म बन्धन में नहीं फंसता है।'' क्योंकि आसक्ति से रहित ज्ञान में स्थित हुए चित वाले यज्ञ के लिये आचरण करते हुए मुक्त पुरुष के सम्पूर्ण कर्म नष्ट हो जाते है और यज्ञीय भावना से युक्त पुरुष समस्त बन्धनों से भी मुक्त हो जाता है।''

गत संगस्य मुक्तस्य ज्ञाना-वस्थित चेतस:।

यज्ञायाचरत: कर्म समग्र प्रविलीयते।।

श्रीमद्भगवद्गीता-संवादात्मक 'शैली में रचित एक साहित्यिक विरासत के रूप में कृष्ण जी की 'अमरवाणी' है। यह आध्यात्मिक ज्ञानकोष के रूप में मानव की पिपासा को शान्त करने का महत्वपूर्ण स्रोत है। डा. सत्यपाल शर्मा-विश्व ज्योति जीवनकाला अंक में कहते है कि'' श्रीमद्भगवद्गीता विश्व की ज्ञान पिपासा को शान्त करती है और उसे जीने की कला भी सिखाती है। उसमें चिन्तन की मूल्यवान मणियों के साथ-साथ मानव मंगल की महिमामयी भावभूमि भी है।''

हजारों वर्ष बीत जाने पर भी इस शाश्वत सन्देश ने 'अर्जुनवत्' अनेक मनुष्यों के ज्ञानचक्षु खोलकर उन्हें कर्म का महत्त्व बताया। जीवन जीने की कला सिखाई और मानव जीवन को सार्थक करने का मार्ग प्रशस्त किया। गीता हर वर्ग, हर समाज, हर देश के हर प्राणी के लिए सदैव ज्ञान और कर्म का सन्देश प्रसारित करती रहेगी। श्रीमद्भगवद्गीता के विषय में भगवान श्री कृष्ण जी की स्वीकारोक्ति है।

गीता मे हृदय पार्थ गीता मे सारमुत्तमम्। गीता मे ज्ञानमत्युग्रं गीता मे ज्ञानमण्ययम्।।

गीता मे चोत्तमं स्थान गीता मे परम पदम्। गीता मे परमं गुह्यां गीता मे परमो गुरु।।

भगवान श्री कृष्ण कहते है, हे अर्जुन! गीता मेरा हृदय है। गीता मेरा उत्तम सार है। गीता मेरा सर्वोत्तम निवास है। गीता मेरा परमपद है। गीता मेरा परम रहस्य है। गीता ही मेरा परम गुरु है।

गीता को भगवान कृष्ण ने इतना महत्व प्रदान करके अपने परम प्रिय अर्जुन को गीता के प्रति श्रद्धावान होने की प्रेरणा प्रदान की। आज के इस तनावग्रस्त और पथभ्रष्ट मानव का मन भी जीवन के संघर्ष के प्रति विचलित हो गया है। फलत: मानव निराश और हताश के द्वन्द्व में किंकर्त्तव्यविमूढ'' की स्थिति में पहुंच गया है।

श्रीमद्भगवद्गीता इस कलियुग में प्रकाश स्तम्भ के समान अन्धेरे में भटक रहे मानव का पथ आलोकित कर उसे लक्ष्य तक पहुँचाने में सहायक सिद्ध होती है।

श्रीमद्भगवद्गीता जी की इतनी महिमा जानने के पश्चात् मन में यह जिज्ञासा आना स्वाभाविक ही है कि गीता जी में ऐसा क्या है जो इसे भगवान श्री कृष्ण ने इतना महत्त्व दिया है। अगर हम ध्यान पूर्वक पढ़े तो प्रथम अध्याय के प्रथम 'श्लोक में ही हमें संकेत मिल जाते है कि भगवान ने इस ग्रन्थ में क्या सन्देश दिया है।

धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सव:। मामका: पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत संजय।।1/1

अर्थात् धृतराष्ट्र ने संजय से पूछा कि हे संजय धर्मभूमि कुरुक्षेत्र में युद्ध की इच्छा से एकत्र हुए मेरे और पाण्डु-पुत्रों ने क्या किया ? इस श्लोक में धर्मभूमि और कुरु कर्मभूमि, युद्धभूमि अर्थात् कर्म, धर्म और संघर्ष भूमि अर्थात् जीवन के आधार को ही इस ग्रन्थ का विषय बनाया गया है। अन्तिम पंक्ति में किम् कुर्वत-क्या किया ? से सामान्य मानव के लिए संकेत है कि इस युद्धभूमि जीवन के संघर्ष में हे मानव! तुमने क्या किया ? वास्तव में यह महाभारत हमारे अन्दर ही चल रहा है। हमारे हृदय में ही भगवान का निवास है। जब हमारा मन रुपी अर्जुन विचलित और कर्त्तव्य विमुख हो जाता है तो विवेक रूपी कृष्ण उसे उपदेश देते है। उसे अच्छे और बुरे मार्ग के द्वन्द्व से बाहर निकालते है और धर्म अर्थात् सन्मार्ग पर चलने का उपदेश देते है। कौरव और पाण्डव करणीय और अकरणीय सदाचार और दुराचार की दोनों सेनाएं आमने सामने हो तो उनमें संघर्ष होना स्वाभाविक ही है। जब हम दुविधा अनिर्णय और असमजस की स्थिति में होते है तो हमारे परिवार के लोगों में बैचेनी, असंतोष और जिज्ञासा होना स्वाभाविक ही है।

ऐसी स्थिति उत्पन्न होने पर हमें नीति अनीति का ध्यान भी रखना पड़ता है। क्योंकि हम जो निर्णय लेंगे उसी के अनुसार हमें कार्य भी चुनना पड़ेगा। अत: निर्णय लेने में चूक नहीं होनी चाहिए। गीता में कार्य के प्रति सजगता और उस कार्य में अनासक्ति और फल त्याग का जो प्रेरक सन्देश दिया गया है वही वास्तव में निष्काम कर्मयोग कहलाता है। यह एक प्रयोगात्मक विषय है और मानव जीवन के सफल बनाने हेतु अन्यन्त उपयोगी है। गीता का सार भी यही है।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। मा कर्मफल हेतुर्भूर्मा ते संगोऽस्त्व कर्मणि।। 2/47

अर्थात् कर्म करने में ही तेरा अधिकार होवे, फल के लिए नहीं। इसलिए तू कर्म के फल का हेतु मत हो तथा कर्म न करने में भी तेरी आसक्ति न हो।

गीता वास्तव में मानव को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करती है मानव को ढांढस और सान्त्वना प्रदान करती है। आत्मा की अमरता शरीर की नश्वरता तथा संसार के मिथ्या होने का सन्देश मानव को लक्ष्य तक पहुँचाने का मार्ग आसान बना देता है।

नि:स्वार्थ से अनासक्ति युक्त किया गया निष्काम कर्म ही कर्मयोग है। वास्तव में सम्पूर्ण गीता-ज्ञान इसी विषय पर केन्द्रित है। गीता का प्रत्येक अध्याय के अन्त में वर्णित योग के किसी न किसी प्रारूप पर आधारित है। गीता के प्रत्येक अध्याय के अन्त में योग के एक विशिष्ट पररूप का उल्लेख दिया गया है। यथा प्रथम अर्जुन विशाद योग द्वितीय सांख्य योग, तृतीय कर्म योग, चतुर्थ ज्ञानकर्म सन्यास योग, पांचवा कर्म

(शेष पृष्ठ 7 पर)

सम्पादकीय

अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन–2018 के आकर्षक कार्यक्रम

25, 26, 27, 29 अक्तूबर 2018 को दिल्ली में हो रहे अन्तर्राष्ट्रीय महासम्मेलन की तैयारियां जोरों पर हैं। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली एवं दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्वावधान में हो रहे इस महासम्मेलन में आर्य समाज के प्रचार-प्रसार को गति देने के लिए विशेष कार्यक्रमों का आयोजन किया जायेगा। इन कार्यक्रमों के माध्यम से लोगों को वैदिक विचारधारा से अवगत कराने तथा आर्य समाज से जुड़ने के लिए प्रेरित किया जाएगा। यह महासम्मेलन आर्य समाज के प्रचार-प्रसार के लिए मील का पत्थर साबित होगा। आईये इस महासम्मेलन के मुख्य और विशेष आकर्षक कार्यक्रमों को देखें-

मानव कल्याण एवं विश्वशान्ति एकता यज्ञ

अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन में विराट यज्ञ का आयोजन किया जाएगा। वैदिक काल में राजाओं के द्वारा बड़े-बड़े विशाल यज्ञों का आयोजन किया जाता था। किन्तु आज यह गौरवशाली परम्परा विलुप्त हो गई है। लोगों की यज्ञ में रूचि घटने लगी है। लोग अपनी वैदिक संस्कृति को भूल रहे हैं। यज्ञ की इस परम्परा को बचाए रखने और विकसित करने तथा सनातन संस्कृति को एक करने के उद्देश्य से महासम्मेलन में आर्य समाज ने सामूहिक रूप से यज्ञ करने हेतु दस हजार के करीब लोगों को एकत्र कर, एक समय, एक स्थान और एकरूपता में ढ़ालने के लिए यज्ञ करने का निर्णय लिया है। यज्ञ का यह विराट स्वरूप भारत के इतिहास में अपने आप में एक ऐसा उदाहरण होगा जिससे समस्त भारत के उत्तर दक्षिण तथा पूर्व से लेकर पश्चिम तक के आर्य जन भाग लेंगे। आज आर्य समाज की सबसे बड़ी आवश्यकता यज्ञ की एकरूपता है। प्रत्येक स्थानों पर अपनी-अपनी पद्धति से यज्ञ किया जाता है। पूरे देश में यज्ञ की एक सर्वमान्य विद्वानों द्वारा अनुमोदित विधि को क्रियान्वित किया जाए। इस महासम्मेलन में यज्ञ की यह एकरूपता भी देखने को मिलेगी। इसलिए विराट यज्ञ इस महासम्मेलन का मुख्य आकर्षण होगा।

विश्वशान्ति एवं मानव निर्माण का एकमात्र मार्ग-वेद

पिछले दिनों सुप्रीम कोर्ट के द्वारा भारतीय संस्कृति पर प्रहार करते हुए समलैंगिकता से सम्बन्धित धारा 377 को समाप्त कर दिया तथा विवाहोपरांत संबधों को लेकर अजीब निर्णय दिये गए। इस अवसर पर मानवीय संबंध और वेद के ऊपर चिन्तन किया जाएगा क्योंकि ईश्वर प्रदत्त प्राकृतिक नियमों तथा मानवोचित व्यवहार का आधार वेद है। सुप्रीम कोर्ट के सभी निर्णय वेद के प्रतिकूल हैं इसलिए मान्य नहीं हैं। इसके अलावा वेद के मनुर्भव संदेश को जीवन में धारण करते हुए वैश्विक आतंकवाद से छुटकारा पाया जा सकता है। मानव जाति के कल्याण व सुख शान्ति का आधार वेद है।

राष्ट्र और आर्य समाज का उज्ज्वल भविष्य: आर्य वीर दल:-

राष्ट्र और आर्य समाज उज्ज्वल भविष्य के लिए युवा पीढ़ी को आर्य समाज के साथ जोड़ना आवश्यक है। इस महासम्मेलन में युवा कार्यकर्ताओं के निर्माण पर विशेष चिन्तन किया जाएगा। वर्तमान चुनौतियों के समक्ष आर्य वीर दल अपनी भूमिका किस प्रकार निभा सकता है, इसके लिए आर्य वीरों को तैयार किया जाएगा। आर्य वीर दल एवं आर्य वीरांगनाओं के कार्यक्रमों की रूपरेखा तैयार की जाएगी।

शिक्षा एवं संस्कृति सम्मेलन:-

अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन में शिक्षा एवं संस्कृति सम्मेलन के माध्यम से अन्धविश्वासों के खिलाफ आवाज बुलन्द करने के लिए आर्य समाज के कार्यकर्ताओं को प्रेरित किया जाएगा। वर्तमान में फैल रहे अन्धविश्वास और पाखण्ड़ को दूर करने में आर्य समाज किस प्रकार अपनी सक्रिय भूमिका निभा सकता है? लोगों को आर्य समाज का कार्यकर्ता बनाया जायेगा। धर्म के नाम पर होने वाले व्यापार का विरोध योजनाबद्ध रूप से करके जनता को गुमराह होने से बचाने के लिए आर्य समाज के द्वारा एक अभियान प्रारम्भ करने पर विचार किया जाएगा। अन्धविश्वास समाज के लिए घातक बन चुका है। आर्य समाजें अपने-अपने क्षेत्रों में किस प्रकार योजनाबद्ध तरीके से कार्य करके लोगों का जागरूक करें, इस पर आर्य समाज के पदाधिकारियों को मार्गदर्शन दिया जाएगा।

सांस्कृतिक एवं सामाजिक संचेतना सम्मेलन:-

सांस्कृतिक एवं सामाजिक संचेतना सम्मेलन के माध्यम से सामाजिक एवं पारिवारिक व्यवस्थाओं के बिगड़ते ताने-बाने के विषय में चिन्तन किया जाएगा। अपसंस्कृति का विस्तार होने से वैदिक संस्कार लुप्त हो रहे हैं। इस अवसर पर अभिभावकों को अपनी संतानों में शुभ संस्कार ड़ालने के लिए प्रेरित किया जाएगा। पाश्चात्य संस्कृति का प्रचार होने से आज की पीढ़ी अपने नैतिक मूल्यों से विहीन हो रही है। वर्ष में एक बार मदर्स डे, फादर्स डे, टीचर्स डे मनाकर युवा पीढ़ी अपनी संस्कृति से अपने आदर्शों से भटक गई है। इसलिए माता -पिता को अपना कर्त्तव्य समझते हुए संतान निर्माण की दिशा में विशेष ध्यान देने के लिए प्रेरित किया जाएगा। दूसरी सबसे बड़ी समस्या जातिवाद की है। जातिवाद के जहर ने समाज को खोखला कर दिया है। इस अभिशाप से बचने के लिए वैदिक वर्णव्यवस्था पर विचार किया जाएगा। वैदिक वर्णव्यवस्था के द्वारा ही समाज से जातिवाद को दूर किया जा सकता है। आज सोशल मीडिया दिशाहीन होने के कारण राष्ट्र के लिए घातक बनता जा रहा है। सोशल मीडिया का सदुपयोग किस प्रकार किया जाए और यह आर्य समाज के प्रचार-प्रसार में किस प्रकार सहायक बनें, इस पर भी युवा पीढ़ी को जागरूक करने का कार्य किया जाएगा।

राष्ट्रचिन्तन सम्मेलन:-

राष्ट्र चिन्तन सम्मेलन के माध्यम से राष्ट्र एवं विश्व के समक्ष उपस्थित जन समस्याओं की चर्चा एवं उसके समाधान पर चिन्तन किया जाएगा। विदेशी मिशनरियों द्वारा करवाये जा रहे धर्मान्तरण एवं वैदिक संस्कृति एवं राष्ट्र को खण्ड़ित करने का जो विश्वव्यापी षडयन्त्र किया जा रहा है, उस पर विचार विमर्श किया जाएगा। राष्ट्र में एक समान नागरिक संहिता, राष्ट्र के सभी संसाधनों एवं सुविधाओं का लाभ सभी नागरिकों को समान रूप से प्राप्त हो तथा सभी के लिए न्याय एवं दंड विधान समान हो। सामाजिक असंतुलन में बढ़ती जनसंख्या के घातक परिणाम तथा जनसंख्या नियन्त्रण का कानून सभी के लिए समान रूप से लागू हो, इस पर भी चिन्तन किया जाएगा।

इसके अलावा आर्य परिवार सम्मेलन, विश्व आर्य समाज सम्मेलन, कवि सम्मेलन, गुरूकलों द्वारा व्यायाम प्रदर्शन, महर्षि दयानन्द व्यक्तित्व एवं कृतित्व, निरन्तर क्रियाशील आर्य समाज, नारी का समाज के निर्माण में विशिष्ठ भूमिका को लेकर विस्तार से चिन्तन आदि बहुत से महत्वपूर्ण विषयों पर इस महासम्मेलन में चर्चा की जाएगी। यह अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन भव्य और ऐतिहासिक होगा तथा आर्य समाज की उन्नति के लिए इसके सार्थक परिणाम निकलेंगे। इसलिए इस महासम्मेलन में जाकर एक नई ऊर्जा लेकर समाज और राष्ट्र के लिए कार्य करें। कृण्वन्तो विश्वमार्यम् का लक्ष्य बनाकर इस महासम्मेलन को पूर्णरूपेण सार्थक बनाएं।

प्रेम भारद्वाज

सम्पादक एवं सभा महामन्त्री

यजुर्वेद में गायत्री मंत्र

ले.-शिवनारायण उपाध्याय, 73 शास्त्री नगर दादाबाड़ी, कोटा

गायत्री मन्त्र समाज में सबसे अधिक लोकप्रिय हैं। इसका सबसे अधिक लोकप्रिय होने का कारण संभवत: यह है कि इसमें परमात्मा से अपना तेज अथवा ज्ञान प्रदान करने की प्रार्थना की गई है जिससे कि व्यक्ति की बुद्धि शुद्ध हो जावे और उसके, जीवन के विकास के लिए उचित मार्ग दर्शन करें।

यजुर्वेद में यह मन्त्र चार स्थानों यजुर्वेद अध्याय 3.35 पर, अध्याय 22.9 पर, 30.2 पर तथा 36.3 पर आया हैं। पहले दो स्थानों पर ऋषि, देवता, स्वर व छन्द समान हैं परन्तु तीसरे स्थान यजुर्वेद अध्याय 30.2 पर विश्वामित्र ऋषि के स्थान पर नारायण ऋषि हैं इसी प्रकार अध्याय 36.3 में छन्द व स्वर भिन्न हैं। यजुर्वेद अध्याय 3 मन्त्र संख्या 35 में यह इस प्रकार है-

तत् सवितुर्वरेण्य भर्गो देवस्य धीमहि।

धियो यो न: प्रचोदयात्।

मन्त्र के ऋषि विश्वामित्र, देवता सविता, षट्ज स्वर तथा निचृदगायत्री छन्द हैं।

पदार्थ-हम लोग (सवितु:) सम्पूर्ण विश्व के उत्पति कर्ता (देवस्य) प्रकाशमय शुद्ध परमेश्वर का जो (वरेण्यम्) अति श्रेष्ठ वरण करने योग्य (भर्ग:) दु:खों के मूल को नष्ट करने वाला (तेज:) स्वरूप है (तत्) उसको (धी महि) धारण करें और (य:) सब सुखों का देने वाला परमेश्वर अपनी करूणा करके (न:) हम लोगों की (धिय:) बुद्धियों को उत्तम गुण, कर्म और स्वभाव में (प्रचोदयात्) प्रेरणा करें।

फिर यजुर्वेद अध्याय 22 मंत्र संख्या 9 में भी मंत्र यही हैं। मंत्र के देवता, ऋषि, छन्द, स्वर सभी पूर्व मंत्र के अनुसार ही हैं। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने इसके भाष्य में पदार्थ एवं भावार्थ में कुछ अन्तर अवश्य कर दिया हैं। पाठकों के लिए उसे दे रहे हैं।

तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।

धियो यो न: प्रचोदयात्। यजुर्वेद 22.9

पदार्थ-हे मनुष्यों। (सवितु:) समस्त संसार के उत्पन्न करने हारे (देवस्य) आप से आप ही प्रकाश स्वरूप सबसे चाहने योग्य समस्त सुखों के देने हारे परमेश्वर के जिस (वरेण्यम्) स्वीकार करने योग्य उत्तम (भर्ग:) समस्त दोषों के दाह करने वाले तेजोमय शुद्ध स्वरूप को हम लोग (धीमहि) धारण करते हैं (तत्) उसको तुम लोग धारण करो। (य:) जो (न:) हम लोगों की (धिय:) बुद्धियों को (प्रचोदयात्) अर्थात् उनको अच्छे अच्छे कामों में लगावे वह अन्तर्यामी परमात्मा सबसे उपासना करने के योग्य है?

भावार्थ-सब मनुष्यों को चाहिए कि सच्चिदानन्द स्वरूप नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव सबके अन्तर्यामी परमात्मा को छोड़ के उसकी जगह में अन्य किसी पदार्थ की उपासना कभी न करें, किस प्रयोजन के लिए कि जो हम लोगों से उपासना किया हुआ परमात्मा हमारी बुद्धियों को अधर्म के आचरण से छुड़ा के धर्म के आचरण में प्रवृत्त करे जिससे शुद्ध हुए हम लोग उस परमात्मा को प्राप्त होकर इस लोक और परलोक के सुखों को भोगें इस प्रयोजन के लिये।

वास्तव में मंत्र के अर्थ में कोई परिवर्तन नहीं है केवल भाषा परिवर्तन हैं।

यजुर्वेद अध्याय 30 मंत्र संख्या 2 में भी यह मंत्र आया हैं। यहाँ पर मंत्र में ऋषि नारायण। देवता सविता। निचृद गायत्री छन्द। षड़ज स्वर:। केवल ऋषि में परिवर्तन हुआ हैं।

तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धी महि।

धियो यो न: प्रचोदयात्। यजुर्वेद 30.2

पदार्थ-हे मनुष्यों। (य:) जो (न:) हमारी (धिय:) बुद्धि वा कर्मो को (प्रचोदयात्) प्रेरणा करे उस (सवितु:) समग्र जगत् के उत्पादक सब ऐश्वर्य तथा (देवस्य) सुख के देने हारे ईश्वर के जो (वरेण्यम्) ग्रहण करने योग्य अत्युत्तम (भर्ग:) जिससे दु:खों का नाश हो। उस शुद्ध स्वरूप को जैसे हम लोग धारण करें वैसे (तत्) उस ईश्वर के शुद्ध स्वरूप को तुम लोग भी धारण करो।

भावार्थ-इस मंत्र में वाचक लुप्तोपमालंकार हैं। जैसे परमेश्वर जीवों को अशुभ आचरण से अलग कर शुभ आचरण में प्रवृत करता है वैसे राजा भी करे। जैसे परमेश्वर में पितृभाव करते अर्थात् उसको पिता मानते हैं वैसे राजा को भी मानें जैसे परमेश्वर जीवों में पुत्र भाव का आचरण करता है वैसे राजा भी प्रजाओं में पुत्र वत् बरते जैसे परमेश्वर सब दोष क्लेश और अन्यायों से निवृत है राजा भी होवे। फिर यह मंत्र यजुर्वेद अध्याय 36 मंत्र संख्या 3 में आया हैं। यहाँ मंत्र के साथ तीन व्याहतियां भू:, भुव: और स्व: जोड़ दी हैं। मंत्र के ऋषि विश्वामित्र, देवता सविता, देवी बृहती छन्द: और मध्यम स्वर। पहले तीन मंत्रों में निचृद् गायत्री छन्द तथा षड्ज स्वर था। भूर्भुव: स्व: तत्सवितुर्व रेण्यं भर्गो देवस्य धी महि।

धियो यो न: प्रचोदयात्।

यजुर्वेद 36.3.

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने इसका अर्थ इस प्रकार किया है-

पदार्थ-हे मनुष्यों। जैसे हम लोग (भू:) कर्मकाण्ड की विद्या (भुव:) उपासना काण्ड की विद्या और (स्व:) ज्ञान काण्ड की विद्या को संग्रह पूर्वक पद के (य:) जो (न:) हमारी (धिय:) धारणा वती बुद्धियों को (प्रचोदयात्) प्रेरणा करे उस (देवस्य) कामना के योग्य (सवितु:) समस्त ऐश्वर्य के देने वाले परमेश्वर के (तत्) इस इन्द्रियों से न ग्रहण करने योग्य परोक्ष (भर्ग:) सब दु:खों के नाशक तेज स्वरूप का (धीमहि) ध्यान करें वैसे तुम लोग भी उसका ध्यान करो।

भावार्थ-इस मंत्र में वाचक लुपोत्मालङ्कार हैं। जो मनुष्य कर्म उपासना और ज्ञान सम्बन्धी विद्याओं का संम्यक् ग्रहण कर सम्पूर्ण ऐश्वर्य से युक्त परमात्मा के साथ अपने आत्मा को युक्त करते हैं तथा अधर्म, अनैश्वर्य और दु:ख रूपी मलों को छुड़ाकर धर्म, ऐश्वर्य और सुखों को प्राप्त होते हैं उनको अन्तर्यामी जगदीश आप ही धर्म के अनुष्ठान और अधर्म का त्याग करने को सदैव चाहता हैं।

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने इस प्रकार चारों स्थानों पर अर्थ भेद किया हैं। अध्याय 30 मंत्र 2 तो एक दम भिन्न प्रतीत होता है इस प्रकार के अर्थ करने का उनका उद्देश्य पुनरूक्ति दोष का निवारण करना भी रहा होगा। मेरी दृष्टि से वे इस प्रयास में कुछ सफल भी हुए हैं।

-प्रार्थना-

-ले. मोहन उपाध्याय एम. ए. कवि और लेखक, अजमेर

तुम ही माता-पिता हम सबके
नित्य ध्यान धरते हो;
अन्न और जस, पवन ज्योति से
जीवन को भरते हो।

स्वयं सृष्टि में निसदिन गतिमय
हमें कर्म सिखलाते;
कर्म सरस बन जाए भक्ति से
ज्ञान तभी हम पाते।

करुणामय, हे प्रभो! तुम्हीं हो
जब हम उलटे चलते;
हमें पकड़ सीधे पथ लाते
हम जीवन में फलते।

तुम्हीं शक्ति के, सुख के दाता
जीवन के स्वामी हो,
तुम्हीं सदा आनंदप्रदाता
तुम अंतर्यामी हो।

कैसे भूले नाथ! तुम्हें हम
सुखी सदा जीवन हो;
कर्म भक्ति से और ज्ञान से
यह जीवन पावन हो।

दिव्य दयानन्द का दिव्य चिन्तन

ले.-आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री

आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती दिव्यगुणों से युक्त थे। उनका व्यक्तित्व महान् एवं प्रेरक था। वे आदित्य ब्रह्मचारी, परम आस्तिक एवं अद्भुत योगी थे। बचपन से ही उन्हें आस्तिकता के संस्कार मिले थे और शिव भक्ति की प्रेरणा उन्हें अपने पिता श्री कर्षन जी तिवारी से प्राप्त हुई थी। शिवरात्री के अवसर पर व्रत रखने वाले इस बालक ने देखा कि आधी रात होते-होते सभी भक्त जन निद्रा निमग्न हो गये हैं और शिव की पिण्डी पर चूहे उछल-कूद मचा रहे हैं। इस दृश्य को देखकर उन्हें लगा कि यह सच्चा शिव नहीं हो सकता और मुझे सच्चे शिव की खोज करनी चाहिए। अपनी बहिन और चाचा की मृत्यु के दृश्य ने उनके मन में यह प्रश्न उत्पन्न कर दिया कि मृत्यु क्यों होती है और इससे कैसे बचा जा सकता है ? संसार में दु:ख क्यों है ? और उनके परिशमन का क्या उपाय है ? इन्हीं प्रश्नों के समाधान और सच्चे शिव की खोज में बालक मूलशंकर घर से निकल पड़े। उन्होंने बहुत से स्थानों का भ्रमण किया और ढोंगी संन्यासियों ने उन्हें ठगने में कोई कोर कसर न छोड़ी, पर बालक मूलशंकर निराश नहीं हुए अपितु, सच्चे शिव की खोज और योगविद्या की प्राप्ति के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहे, अन्तत: उन्हें कुछ ऐसे गुरु मिले कि उन्होंने उन्हें योग के गूढ़ रहस्यों को समझाया।

महर्षि दयानन्द सरस्वती दया के सागर थे। उनमें आनन्द का स्रोत निरन्तर प्रवाहित रहता था। इसलिए वे मानापमान से ऊपर उठ गये थे। कोई उनकी निन्दा करे या स्तुति, पत्थर मारे या गालियां दे, वे दु:खी नहीं होते थे। उन्हें सरस्वती सिद्ध थी। वे ज्ञान का अद्भुत भण्डार थे।

स्वामी जी में मानव के प्रति करुणा का भाव चरमोत्कर्ष पर था। संन्यासी होने पर भी उन्होंने संसार के जीवों को तथाकथित वैरागियों की भांति उपेक्षित कर दया और आनन्द के अमृत से वंचित नहीं रखा। सच तो यह है कि उन्होंने प्राणिमात्र को इस दया और आनन्द का पात्र बनाया।

अनूपशहर में एक दुष्ट ने उन्हें विषयुक्त पान दिया, चबाने से पता लगा तो उन्होंने न्योलिक्रिया द्वारा वमन कर विष निकाल दिया। वहाँ सैय्यद मुहम्मद तहसीलदार आपका भक्त था। उसने हत्यारे को पकड़कर बन्दीगृह में डालने की बात कही। स्वामी दयानन्द जी ने देव सुलभ दयालुता का परिचय देते हुए यह स्मरणीय वाक्य कहा कि मैं संसार को कैद कराने नहीं आया हूँ, अपितु कैद से छुड़ाने आया हूँ।

एक दिन अहमदगढ़ के पंडित कमलनयन और अलीगढ़ के पंडित सुखदेव अपने पन्द्रह-बीस साथियों सहित कुछ प्रश्न पूछने के लिए स्वामी जी के पास आये। उस समय स्वामी जी कहीं गये हुए थे। थोड़ी प्रतीक्षा के पश्चात् जब स्वामी जी वहाँ आये, तब इन सबने अभ्युत्थानपूर्वक अभिवादन किया। स्वामी जी तृणासन पर बैठकर थोड़ी देर के लिए ध्यानावस्थित हो गये। फिर आँखें खोलकर आगन्तुकों से कई बार कहा कि जो कुछ पूछना है, पूछ लो, परन्तु किसी के मुख से एक शब्द भी नहीं निकला। तब स्वामी जी ने उपदेश देना आरम्भ किया। वे लोग सुनते रहे और 'सत्य है, सत्य है' कहते रहे। वहाँ से लौटते हुए मार्ग में वे लोग कहने लगे कि पता नहीं दयानन्द में कौन सी शक्ति है कि उनके समक्ष जाकर हम सबके मुँह पर ताले लग गये और हम एक भी प्रश्न न पूछ सके।

सबसे अधिक उल्लेखनीय घटना स्वामी जी और पादरी डब्ल्यू पार्कर का शास्त्रार्थ है। यह शास्त्रार्थ पन्द्रह दिन तक चला और प्रतिदिन 2-3 घण्टे हुआ करता था। स्वामी जी ने शास्त्रार्थ में पादरी महोदय को निरुत्तर कर दिया। उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि मनुष्य के द्वारा ईश्वर और मुक्ति की प्राप्ति मानना मूर्तिपूजा से भी बुरा है। एक दिन शास्त्रार्थ का विषय सृष्टि-उत्पत्ति था। जब पादरी महोदय ने यह पक्ष लिया कि सृष्टि को उत्पन्न हुए पांच सहस्त्र वर्ष हुए हैं, तब स्वामी जी एक बिल्लौर-पत्थर उठा लाये और पूछा कि आप लोग साईंस जानते हैं। यह पत्थर इस रूप में कितने वर्षों में आया होगा? तब उत्तर मिला कई लाख वर्षों में। इस पर पादरी महोदय ने कहा कि मेरा अभिप्राय यह है कि मनुष्य सृष्टि को पांच सहस्त्र वर्ष हुए हैं, परन्तु स्वामी जी ने इस पर भी आक्षेप किया कि सृष्टि की उत्पत्ति का प्रश्न है, जिसमें मनुष्य भी आ गया। इस पर पादरी महोदय निरुत्तर हो गये।

अपने-अपने मौला पर सबको बड़ा नाज़ है।
मेरा दयानन्द तो सबका सरताज है।
कहूंगा पीरों पैगम्बरों से तुम रुतवे में हारे हो।
दयानन्द चौदहवीं का चांद है,
तुम सब टिमटिमाते सितारे हो।

अपने त्याग और तपस्या के बल पर दयानन्द ने ऋषित्व प्राप्त किया था, अत: उन्हें महर्षि दयानन्द सरस्वती कहना सार्थक है।

पंतजलि ऋषिकृत महाभाष्य में ऋषियों की संख्या 88 हजार बतायी गयी है। (अष्टाशीति सहस्त्राणि ऋषय: बभुवु:) उनमें से केवल आठ ऋषियों ने गार्हस्थ धर्म का निर्वाह किया। उस समय ऋषि बनना आसान था क्योंकि ऋषिपुत्र भी ऋषि ही होते थे। स्वामी दयानन्द के साथ ऐसा नहीं था, परम आस्तिक होते हुए भी उनके पिता श्री कर्षण ऋषि नहीं थे। अपनी गहन साधना, त्याग-तपस्या एवं वेदों में गहरी निष्ठा के कारण दयानन्द ने न केवल ऋषित्व प्राप्त किया अपितु महर्षि बने।

वेद को स्वत: प्रमाण मानकर ऋषिवर दयानन्द ने अन्य शास्त्रों को परत: प्रमाण माना। वेदों का तर्क संगत भाष्य कर उन्होंने अनेक भ्रान्तियों का निवारण किया।

युगनिर्माता वेदोद्धारक, समाज सुधारक का जन्म भारतीय जन-जीवन के सुधार के निमित्त हुआ था। जिस समय दयानन्द जी का प्रादुर्भाव हुआ उस समय भारत की दशा शोचनीय थी।

देश में चारों ओर अंधकार एवं अशान्ति के बादल मंडरा रहे थे। जिधर ही देखो उधर त्राहि माम् की करुण क्रन्दन सुनाई देती थी। देश की सामाजिक दुरावस्था, धार्मिक विभिन्नता, बहुदेवतावाद, छुआछूत-भेदभाव के परिणाम स्वरूप भारतवर्ष शताब्दियों से जर्जरित हो रहा था। मानव-मानव का रक्त पीने के लिए तैयार था। योग के नाम पर ढोंग, ईश्वर के नाम पर पाखण्ड, धर्म के नाम पर दुकानें खोली जा रही थी। गृहदेवियों तथा शूद्रों को समाज में हीन दृष्टि से देखा जाता था। वेद किस चिड़िया का नाम है, किसी को पता नहीं था।

भारतीय संस्कृति या इसके प्राचीन साहित्य को पढ़ें तो पता लगता है कि-

सर्वेषां तु नामानि, कर्माणि च पृथक्-पृथक्।
वेद शब्देभ्य: एवादौ, पृथक् संस्थाश्च निर्ममे।।

अर्थात् सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर ने वेद के माध्यम से सबको नामकर्मादि की शिक्षा दी है। जहाँ अपौरुषेय वेदों को मध्यकालीन स्वार्थी व्यक्तियों ने जनता-जनार्दन से दूर और अनुपयोगी एवं अश्रद्धेय बनाने में भी कोई कसर नहीं छोड़ी। 'त्रयो वेदस्य कर्तार: धूर्तभाण्ड निशाचरा:' जैसी अनर्गल किंव-दन्तियां प्रचलित थीं। वेद का पढ़ना तो दूर, सुनना भी प्राणों के लिए घातक था।

ऐसी विकट परिस्थिति में सूर्य समान तेजस्वी ब्रह्मचारी देव दयानन्द ने अनेक मत-मतान्तर रूपी पापान्धकार को नष्ट करने के लिए तथा वेदों का संदेश देने के लिए ऋषि शास्त्रार्थ रूपी रणांगन में आये थे। ऋषि दयानन्द साहस और धैर्य से कष्टों को सहन करके सर्वत्र जनहित कल्याणी की दुन्दुभि बजाते रहे। उन्होंने वेदों का प्रमाण देते हुए कहा-

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्य:।
बह्मराजन्याभ्यां, शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय।

अर्थात् वेद पढ़ने और पढ़ाने का सब मनुष्यों को अधिकार है। चाहे स्त्री या पुरुष, सभी वेदों को पढ़ के तदुक्त आचरण कर सकते हैं और ये वाक्य कहे-

सुमंगली प्रतरणी गृहाणाम्।

अर्थात् विदुषी स्त्रियां ही राष्ट्र व समाज रूपी घर की नौका हैं। इस प्रकार का मार्मिक संदेश राष्ट्र को स्वामी जी ने दिया।

श्री रामचन्द्र जी ने लंका पर चढ़ाई करी
पत्नी का बदला रावण से चुकाया था।
जर और जमीं पर पांडव, कौरव लड़े,
भाई ने भाई का रक्त रण बीच बहाया था।
कंस से लड़ाई करी श्री कृष्ण योगी ने,
केश पकड़ मारा वंश दैत्यों का मिटाया था।
मगर लड़े दयानन्द 'राघव' देश की भलाई को,
जीवन भर गला पाखंड का दबाया था।। **(क्रमश:)**

चमत्कारों का पोलखाता

ले.-इन्द्रजित देव यमुनानगर

(गतांक से आगे)

दु:ख की बात यह है-कि अधिकतर लोग यह नहीं सोचते कि बाबा के वस्त्रों के नीचे कोई-कारखाना तो था नहीं, फिर घड़ियाँ कैसे बाहर निकल आती थीं यदि ऐसे ही अंगूठियाँ बन सकती हैं तो सभी स्वर्णकारों की दुकानें बन्द हो जानी चाहिए थीं। यदि स्वर्ण न हो, स्वर्णकार न हो तो तथा उसके उपकरण व साधन न हों तो घड़ियाँ बन ही नहीं सकतीं, यह न सोचने वाले लोग ऐसे बाबाओं के शिष्य बनते हैं। ज्यों-ज्यों उक्त बाबा की प्रसिद्ध होती गई त्यों-त्यों अपने इस प्रकार के 'चमत्कार' दिखाने उसने बन्द कर दिए तथा वह अपने आश्रम तक ही सीमित होकर रह गया था परन्तु दिव्य व अलौकिक शक्तियाँ प्राप्त कर लेने का दावा करने वाले बाबाओं की कमी अब भी नहीं है। बिना उपादान व साधारण कारणों के जब ईश्वर भी कुछ नहीं बना सकता तो कोई मनुष्य कैसे ऐसा कर सकता है ?

इस विषय में कुछ ऐसे ढोंगों का भण्डाफोड़ करना भी हमें अभीष्ट है। जो ढोंगी साधुओं द्वारा जनता को मूर्ख बनाकर धन ऐंठने के लिए किए-दिखाए जाते हैं। पहला ढोंग किसी बाबा द्वारा भभूत उत्पन्न करना है। वह बाबा राख, इत्र तथा चावल के मांड की गोलियाँ बनाकर उन्हें अँगूठे के बीच फंसा कर रखते हैं तथा कुशलतापूर्वक वायु में हाथ हिलाकर लोगों में बांटते हैं व प्रभावित करते हैं। इसी प्रकार सिक्के या चित्र से भभूत पैदा करने के लिए ऐसे ढोंगी मर्यूरस क्लोराइड का प्रयोग करते हैं। पहले से रसायण लगी अंगुलियों से जब ये लोग चित्रों को छूते हैं तो रासायनिक क्रिया से तस्वीर या सिक्के का अल्यूमीनियम राख में बदल जाता है।

कई ढोंगी साधु त्रिशूल को जीभ के आरपार करके दर्शकों को प्रभावित करते हैं। वस्तुत: उस त्रिशूल की बनावट में एक प्रकार का रूप होता है जिसे बाबा लोग कुशलता से छिपा कर जीभ में फँसा लेते हैं। इसी प्रकार कुछ बाबा बने ढोंगी साधु अपनी मन्त्र-शक्ति से स्वयं अग्नि हवनकुण्ड में अग्नि प्रज्वलित करने का दावा करते हैं। इसके लिए वे ग्लीसरीन को धोखे से घृत के रूप में प्रयोग करते हैं तथा लकड़ियों के नीचे पोटेशियम परमैगनेट रखा रहता है। जब इस पर हवा की जाती है तो ग्लीसरीन तथा पोटेशियम परमैगनेट की क्रिया से अग्नि प्रज्वलित स्वत: होती है। इस विषय में हम महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के १३ जुलाई, १८७५ को पुणे में दिए एक उपदेश में से ये शब्द उद्धृत करना उचित समझते हैं- ''मन्त्रों के कारण आग उत्पन्न होती थी, यदि ऐसा मानें तो मन्त्र बोलने वाला स्वयं क्यों नहीं जलता था ?''

कुछ स्थानों पर तान्त्रिक भोले-भाले लोगों से धन उगाहने के उद्देश्य से उन पर भूत-प्रेत का साया बताते हैं तथा उनके मन में बैठे अन्ध-विश्वास का अनुचित लाभ उठाने के उद्देश्य से उन्हें भयाक्रान्त कर देते हैं। तत्पश्चात् भूत-प्रेत निकालने के नाम पर धन, चावल, नारियल तथा अन्य सामान मंगाते है। 'मन्त्र' पढ़ते हुए जब नारियल पर पानी फैंकते हैं, तो पहले से सोडियम अन्दर रखे नारियल में से सोडियम और पानी की क्रिया से आग लग जाती है परन्तु 'साधु' लोग उस व्यक्ति के भूत-प्रेत या चुड़ैल को निकालने का दावा करते हैं।

मुस्लिम समुदाय के पीरों-फ़कीरों द्वारा अग्नि पर चलना बहुत प्रचलित है। वस्तुत: मानव शरीर बिना जले तथा बिना पीड़ा के एक सैकण्ड के तीसरे हिस्से तक आग सहन कर सकता है। इसी सिद्धान्त का लाभ लेते हुए ये फ़कीर जल्दी-जल्दी आग के शोलों पर पाँव रखते हुए आग को पार करते हैं। इससे उन्हें कोई परेशानी नहीं होती। इसी प्रकार कई 'साधु' अग्नि की लपटों को हाथ पर रख कर आरती करते हैं तथा बाद में उसे मुँह में डाल लेते हैं। सच्चाई यह है कि इसके लिए वे कपूर के बड़े टुकड़े का प्रयोग करते हैं। इसे जलाकर एक सैकण्ड में तीन बार जल्दी-जल्दी हाथ बदलते रहने से न तो हाथ जलता है और उसे जब मुँह में रखा जाता है, तो लार मुँह को जलने से बचाता है। टुकड़ा बड़ा होने के कारण यह अंगारे के रूप में नज़र आता है। इसी सिद्धान्त के आधार पर कई 'साधु' मशाल से अग्नि स्नान करते हैं।

खाली जग में पानी पैदा करने का भी एक चमत्कार कुछ लोग दिखाते हैं। इसका आधार यह है कि बर्तन में दो सतहों का होना है। जब बर्तन के तली में छेद होता है। उसे जब अंगुली से बन्द कर दिया जाता है, तो पानी गिरना बन्द हो जाता है। अंगुली हटा लेने पर पानी दोबारा आने लगता है। इसी विधि का प्रयोग करके केरल में कई 'साधु' लोगों के घरों का जल मन्त्र-शक्ति से आकाश मार्ग से 'स्वर्ग' में भेजते हैं तथा देवताओं को आदेश देकर उसे पृथ्वी पर लाकर भक्तों के दु:ख दूर करने का दावा करते हैं। इस प्रकार लोगों को मूर्ख बनाकर अपनी जेबें भरते हैं। इसी प्रकार अस्सी/एक सौ किलोग्राम तक भार अंगुलियों की सहायता से उठाना भी भौतिकी के सिद्धान्त पर आधारित है। मध्य प्रदेश में विमल सागर जैन मुनि ने साड़ी के एक टुकड़े पर मिट्टी की परत पर हवन किया था। बाद में जब उसी साड़ी को निकाला गया तो वह जली बिल्कुल नहीं थी। उस साड़ी का एक-एक टुकड़ा पच्चास-पच्चास हज़ार रु० में भक्तों में बेचा गया था। सत्य यह है कि मिट्टी की परत आग की सारी गर्मी सोख लेती है। इस प्रकार उसके नीचे रखी गई साड़ी जली नहीं थी। एक अन्य चमत्कार में बाल के भीतर पानी सोखे सपंज का गोला रखकर जटाओं से सरलता से पानी निकाला जा सकता है।

ऐसे चमत्कार वस्तुत: ढोंगी लोगों के 'हाथों की सफ़ाई' हैं। जादूगर ऐसे चमत्कार दिखाते फिरते हैं परन्तु वे ईमानदारी से यह स्वीकारते हैं कि वे विज्ञान व प्राकृतिक व्यवस्था के विपरीत कुछ नहीं कर रहे जबकि दूसरे लोग स्वयं को अलौकिक सिद्धियाँ प्राप्त व्यक्ति घोषित करके दर्शकों को धोखा देते हैं व अन्ध विश्वासों का बढ़ावा देते हैं। आवश्यकता है कि वैदिक सिद्धान्तों की तार्किक, दार्शनिक व विज्ञान के दृष्टिकोण से परख की जाए तथा सत्य को ही स्वीकार किया जाए।

चरित्र निर्माण

-डा. निर्मल कौशिक

आओ हम सब अपना चरित्र निर्माण करें
माँ, बहू, बेटी, बहन का सम्मान करें

माँ के समान हर औरत को मानें
सभी बेटियों को अपनी ही जानें
निर्भय हो नारी जाति ऐसा प्रावधान करें
आओ हम सब अपना चरित्र निर्माण करें

अब कन्या भ्रूण हत्या न होने पाए
हर कन्या अपना जीवन जीने पाए
हम सद्विचारो का आदान प्रदान करें
आओ हम सब अपना चरित्र निर्माण करें

बलात्कार का भय कब तक सताएगा
कानून बलात्कारी को कब सजा दिलाएगा
बेटियां सुरक्षित हों ऐसा कोई अनुसधान करें
आओ हम सब अपना चरित्र निर्माण करें

भ्रष्ट समाज की सूरत बदलनी चाहिए
क्रान्ति की मशाल अब जलनी चाहिए
नारी को आश्वस्त कर उसका सम्मान करें
आओ हम सब अपना चरित्र निर्माण करें

नारी अब और अत्याचार नहीं सहेगी
अब उसकी अश्रुधार कभी नहीं बहेगी
नारी शक्ति के गौरव का हम गान करें
आओ हम सब अपना चरित्र निर्माण करें

पृष्ठ 2 का शेष-श्रीमद्भगवद्गीता में ...

सन्यास योग, छठा आत्मसंयम योग, सातवां ज्ञान विज्ञान योग, आठवां अक्षर ब्रह्म योग, नौंवा राजविद्या राजगुह्या योग, दसवां विभूति योग, ग्यारहवां विश्वरूप दर्शन योग, बारहवां भक्तियोग, तेरहवां क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ विभाग योग, चौदहवां गुणत्रय विभागयोग, पन्द्रहवां पुरूषोतम योग, सोलहवां दैवासुर संपदिभाग योग, सतारहवां श्रद्धात्रय विभाग योग, अठारहवां अन्तिम अध्याय मोक्ष सन्यास योग विषय से अनुप्राणित है।

इन सभी 18 अध्यायों में कुल 800 श्लोक है। इन सभी 'श्लोकों में कृष्ण ने अर्जुन के माध्यम से प्रत्येक जीव को विशाद और निराशा के समय अपने कर्त्तव्यपथ से विचलित न होने का प्रेरक सन्देश दिया है। कर्म करते हुए अनासक्त रहने और फल की इच्छा में लिप्त न होने पर बल देते हुए योग को आधार बनाया गया है। 'योग' के विषय में कहा गया है।''योगश्चित्तवृति निरोधः'' अर्थात् 'चित की वृतियों के निरोध ही योग है। जब तक साधक शरीर मन और बुद्धि को शुद्ध कर आत्मा के पूर्ण विकास से इन्हें शुद्ध नहीं कर लेता है तब तक शान्ति व विवेक की सिद्धि सम्भव नहीं है। इसका अर्थ यह हुआ कि मनुष्य को सब ओर से अपने मन को हटाकर एकाग्रचित होकर अपने कर्म में प्रवृत्त होना चाहिए। कर्म कौन सा ? जो दूसरों को लाभ देने वाला हो, परोपकार की भावना से किया गया ससत्कर्म हो असत्कर्म नहीं। सभी वेदों उपनिषदों और धर्म ग्रन्थों में सत्कर्म करने के लिए ही प्रेरित किया गया है।

लेकिन इस बात का निर्णय कैसे हो कि सत्कर्म कौन सा है ? इसके लिए गीता में ही भगवान ने समाधान किया है कि स्वधर्म का पालन करो स्वधर्म का पालन ही श्रेयस्कर है। पर धर्म भय को देने वाला है।

श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः परमधर्मात्स्वनुष्ठितात् स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः ।3/35

अर्थात् अच्छी प्रकार आचरण किए हुए दूसरे के धर्म से गुणरहित भी अपना धर्म अति उत्तम है। अपने धर्म में मरना भी कल्याण कारक है और दूसरे का धर्म भय देने वाला है।

इस प्रकार स्वधर्म में प्रवृत्त सत्कर्म करने वाला व्यक्ति पुण्य का भागी होकर मोक्ष को प्राप्त होता है और ईश्वर से तादात्म्य स्थापित कर लेता है।

यही वास्तव में कर्मयोग है। एकाग्रचित होकर कर्म-कौशल ही योग कहलाता है। कहा भी है''योगः कर्मसु कौशलम्'' यही गीता का निष्काम कर्मयोग है जो विचलित मन को एकाग्र करने में सक्षम है। अंग्रेजी में एक कहावत है अर्थात् काम ही पूजा है। भगवान श्री कृष्ण ने पाप-मुक्त होने का सरलतम उपाय बताते हुए निष्काम कर्मयोग का मार्ग सुझाया है। इससे भी सरलतम उपाय है। ईश्वर के प्रति समर्पण भाव से किए गए कर्म। भगवान स्वयं कहते है

सर्वान् धर्मान् परित्यज्य मामेकम् शरणं व्रज। अहम् त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षिष्याणि मा शुचः।।18/66

इसी परिप्रेक्ष्य में भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन से पंचम अध्याय में कर्म सन्यास योग तथा तृतीय अध्याय में कर्मयोग का वर्णन करते हुए दोनों को ही कल्याणकारी बताया है और कर्म-सन्यास की अपेक्षा कर्मयोग को साधन सुगम और श्रेष्ठ बताया है। भक्ति युक्त कर्मयोग के लिए भगवान कृष्ण ने स्वयं अर्जुन से इसकी विस्तृत व्याख्या छठे अध्याय में की है और कर्मफल का आश्रय न लेकर कर्म करने वाले पुरुष को ही सन्यासी और योगी कहा है। भगवान कहते है।

अनाश्रितः कर्मफलं कार्य कर्म करोति यः। य सन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः।। 1/6

अर्थात् जो पुरुष कर्मफल का आश्रय न लेकर करने योग्य कर्म करता है। वह सन्यासी तथा योगी है और केवल अग्नि का त्याग करने वाला सन्यासी नहीं है तथा केवल क्रियाओं का त्याग करने वाला योगी नहीं है।

भगवान् कृष्ण ने केवल एक अर्जुन को ही यह गीता का सन्देश नहीं दिया यह आज के सन्तप्त, तनावग्रस्त, निराश और हताश मानव रुपी अर्जुन के लिए आज भी उतना ही सार्थक और महत्वपूर्ण है जितना उस युग में था। गीता का निष्काम कर्मयोग उन सभी मनुष्यों को प्रेरणा प्रदान करता है जो अर्जुन की तरह मोहपाश में आसक्ति के कारण अपने कर्त्तव्य पथ से भटक गए है और सत्कर्म करने से पीछे हट गए है। अपने धर्मक्षेत्र और कर्मक्षेत्र से अपने को विच्छेद कर लेना चाहते है। उनके लिए गीता का निष्काम कर्मयोग एक नई चेतना एवं कर्त्तव्य की शक्ति प्रदान करने में सक्षम है। आज का मानव सद्साहित्य से विमुख हो गया है। हमें गीता जैसे पावन ग्रन्थों का अध्ययन कर प्रेरणा लेनी चाहिए।

हमारे सभी महान साधकों और महानुभावों ने श्रीमद्भगवद्गीता का अध्ययन करके ही अपने जीवन को सत्कर्मों से अलंकृत किया है। गीता जी के निष्काम कर्मयोग में ही भगवान कृष्ण के ज्ञान का संक्षिप्त सारांश परिलक्षित होता है। इसे जीवन में धारण कर मोक्ष का मार्ग सहज ही प्रशस्त किया जा सकता है। इसमें भगवान कृष्ण ने ईश स्मरण करते हुए कर्त्तव्यपथ पर अग्रसर होने वाले पुरुष को अनासक्ति (फल की इच्छा न रखने पर) द्वारा ईश प्राप्ति का सरलतम मार्ग दर्शाया है। केवल 'शर्त यह है कि ईश्वर के प्रति समर्पणभाव से अनासक्त होकर कार्यरत होना। भगवान ने अर्जुन से तो कहा ही है साथ ही साथ सामान्य मानव के लिए भी निष्काम कर्मयोग का मार्ग प्रशस्त किया है। योगीराज कृष्ण कहते हैं।

तस्मादसक्तः सततं कार्य कर्म समाचर। आसक्तो ह्याचरन्कर्म परमात्नोति पुरुषः।। गीता-3/19

अर्थात् तू अनासक्त हुआ निरन्तर कर्तव्यकर्म का अच्छी प्रकार आचरण कर, क्योंकि अनासक्त पुरुष, कर्म करता हुआ, परमात्मा को प्राप्त होता है।

इस प्रकार श्रीमद्भगवद्गीता मानव के कल्याण हेतु अर्जुन और योगीराज कृष्ण के मध्य एक ऐसा रचनात्मक संवाद है जो मानव के अन्तर्द्वन्द्व को परिलक्षित करता है। अर्जुन को सान्त्वना प्रदान कर कर्म में निरत होने और उसके फल की कामना न करने का जो सन्देश भगवान ने अर्जुन को दिया है वह आज के परिवेश में भी उतना ही प्रासंगिक और सार्थक है जितना महाभारत काल में था। अतः हमें गीता का सम्मान करते हुए भगवान कृष्ण के बताए हुए कर्त्तव्य पथ पर चल कर अपना मानव-जीवन सार्थक करना चाहिए।

आर्य मर्यादा के ग्राहक महानुभावों की सेवा में

आर्य मर्यादा साप्ताहिक निरन्तर आपकी सेवा में पहुंच रही है। जिन आर्य मर्यादा के ग्राहकों ने अभी तक अपना वार्षिक शुल्क या पिछला शुल्क नहीं भेजा है उनसे विनम्र प्रार्थना है कि वह अपना वार्षिक शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। आर्य मर्यादा का वार्षिक शुल्क मात्र 100/- रुपये है और आजीवन सदस्यता शुल्क 1000/- रुपये है। इसलिये मेरी सभी ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि वह अपना शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। इसके साथ ही आर्य समाजों के पदाधिकारियों एवं सदस्यों से भी निवेदन है कि वह अधिक से अधिक आर्य मर्यादा के ग्राहक बनाने में सहयोग करें। आशा है आप का सहयोग हमें प्राप्त होगा।

-व्यवस्थापक आर्य मर्यादा

शं वातः शꣳहि ते घृणिः शं ते भवन्त्विष्टकाः।
शं ते भवन्त्वग्नयः पार्थिवासो मा त्वाभिशूशुचन्।।

-यजु० ३५.८

भावार्थ-दयामय परमपिता परमात्मा, हम सबको वेद द्वारा उपदेश करते हैं कि-हे मेरे प्यारे पुत्रो! आप सबको चाहिये कि आप लोग ऐसे अच्छे धार्मिक काम करो और मेरी भक्ति, प्रार्थना उपासना में लग जाओ, जिससे अग्नि, बिजली सूर्यादि सब दिव्य देव, आपको सुखदायक हों। प्यारे पुत्रो! ये सब पदार्थ आप लोगों को सुख देने के लिए ह मैंने बनाए हैं, दुःख देने के लिए नहीं। दुःख तो अपनी अविद्या, मूर्खता, अधर्म करने और प्रभु से विमुख होने से होता है। आप, पापों को छोड़कर मुझ प्रभु की शरण में आकर सदा सुखी हो जाओ।

आर्य समाज जालन्धर छावनी का वेद प्रचार सप्ताह हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न

आर्य समाज जालन्धर छावनी का वेद प्रचार सप्ताह 17 सितम्बर से 23 सितम्बर 2018 तक बड़ी श्रद्धा, उत्साह एवं उल्लास के साथ मनाया गया। इसमें प्रवचन के लिये आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महोपदेशक श्री विजय कुमार शास्त्री एवं भजनों के लिये श्री अरुण कुमार विद्यालंकार जी विशेष रूप से पधारे। कार्यक्रम में आर्य समाज के अधिकारियों, सदस्यों, स्त्री आर्य समाज एवं के.एल. आर्य गर्ल्ज हाई स्कूल जालन्धर छावनी के स्टाफ एवं बच्चों ने बढ़ चढ़ कर भाग लिया। आर्य समाज जालन्धर छावनी के वानप्रस्थी आदरणीय श्री ब्रह्ममुनि जी पूरे सप्ताह सुबह एवं रात्रि कार्यक्रम में उपस्थित रहे। कार्यक्रम में यज्ञ, स्तुति, प्रार्थना उपासना एवं धार्मिक ग्रंथों के अध्ययन के साथ साथ आत्मिक चिन्तन पर ध्यान देने की आवश्यकता पर बल दिया गया। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महोपदेशक श्री विजय शास्त्री जी ने अपने प्रवचनों में बताया कि माता पिता और गुरू सन्तान का निर्माण करने वाले होते हैं। माता पिता और गुरू जैसा चाहे सन्तान को बना सकते हैं। जब हम संसार में किसी महापुरूष का जीवन चरित्र पढ़ते हैं और उनके जीवन पर दृष्टि डालते हैं तो हमें स्पष्ट रूप से उनके चरित्रों पर माता,पिता और उसके गुरू की छाप दिखाई देती है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी सत्यार्थ प्रकाश के दूसरे समुल्लास में लिखते हैं कि–मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरूषो वेद अर्थात् एक माता, दूसरा पिता और तीसरा आचार्य होवे तभी मनुष्य ज्ञानवान होता है। वह कुल धन्य, वह सन्तान बड़ा भाग्यवान! जिसके माता और पिता धार्मिक तथा विद्वान हों। जितना माता सन्तानों पर प्रेम, उनका हित करना चाहती है उतना अन्य कोई नहीं करता। इसीलिए मातृमान् अर्थात् प्रशस्ता धार्मिकी विदुषी माता विद्यते यस्य स मातृमान् धन्य वह माता है कि जो गर्भाधान से लेकर जब तक पूरी विद्या न हो तब तक सुशीलता का उपदेश करे। बालकों को माता सदा उत्तम शिक्षा करे, जिससे सन्तान सभ्य हो और किसी अंग से कुचेष्टा न करने पावें। जब बोलने लगे तब उसकी माता बालक की जिह्वा जिस प्रकार कोमल होकर स्पष्ट उच्चारण कर सके वैसा उपाय करे। प्रश्न पैदा होता है कि क्या सचमुच ही माता पिता और गुरू जैसा चाहे श्रेष्ठ सन्तान का निर्माण करे? माता पिता और गुरू सन्तान को महान चरित्रवान, दयावान, पराक्रमी, वीर, योद्धा, धर्मात्मा ईमानदार बनाने में समर्थ है। परन्तु वहीं समर्थ है जो स्वयं कुछ बने हुए हैं, जो स्वयं शिक्षित है, जो स्वयं गुणों का भण्डार है सुयोग्य और लायक है। केवल सुयोग्य माता पिता और गुरू ही सुयोग्य सन्तान का निर्माण कर सकते हैं। इसलिए माता, पिता और गुरू का शिक्षित होना तथा सदाचार से युक्त होना अति आवश्यक है। 17 सितम्बर से 23 सितम्बर तक यजमानों ने बड़ी श्रद्धा से यज्ञ में आहुतियां प्रदान दी। यज्ञ की सुगन्धि से वातावरण आनन्दमय हो गया। सभी यजमानों एवं उपस्थित सज्जनों को वेद प्रचार सप्ताह के अन्तिम दिन 23 सितम्बर को पूर्णाहुति के पश्चात धार्मिक पुस्तकें एवं प्रसाद के रूप में फल वितरित किये गये। इसके पश्चात लंगर का आयोजन किया गया। श्री अयोध्या प्रसाद जी मंत्री आर्य समाज ने मंच का संचालन कुशलतापूर्वक किया एवं व्यवस्था का उत्तम प्रबन्ध किया। आर्य समाज के प्रधान श्री चन्द्र गुप्ता जी ने सभी के सहयोग के लिये आभार व्यक्त किया।

आर्य समाज जालन्धर छावनी में वेद प्रचार सप्ताह के अन्तिम दिन पूर्णाहुति डालते हुये यजमान।

–चन्द्र गुप्ता प्रधान
आर्य समाज जालन्धर छावनी

आर्य कालेज लुधियाना ने गांधी को किया नमन

समारोह को सम्बोधित करते हुये आर्य कालेज की प्रिंसीपल डा. सविता उप्पल जी चित्र एक में एवं चित्र दो में प्रतियोगिता में भाग लेने वाली छात्रा को सम्मानित करते हुये समारोह के आयोजक।

आर्य कालेज लुधियाना में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के 150वें जन्म दिन पर श्रद्धा के सुमन अर्पित कर याद किया। इस अवसर पर समारोह की मुख्य अतिथि कालेज प्रिंसीपल डाक्टर सविता उप्पल रही। इस अवसर पर डाक्टर सविता उप्पल ने सम्बोधित करते हुये कहा कि महात्मा गांधी ने देश को आजाद करवाने के लिये जो क्रान्तिकारी आन्दोलन किया राष्ट्र उन्हें कभी भुला नहीं पायेगा। उन्होंने कहा कि राष्ट्रपिता से हमें समर्पण की भावना को अपनाना चाहिये। उनके व्यक्तित्व के मध्येनजर जब तक भारत देश रहेगा तब तक बच्चा बच्चा उन्हें याद रखेगा। उन्होंने युवकों को आह्वान करते हुये कहा कि राष्ट्र का निर्माण नवयुवकों की भीड़ से नहीं हुआ करता है। राष्ट्र के निर्माण के लिए ऐसे लोगों की जरूरत पड़ती है जिनके जीवन में यौवन शक्ति का प्रवाह हो परन्तु साथ ही विवेक की मशाल भी जलती रहे। यदि जीवन में विवेक की मशाल नहीं जलती है तो तरूणाई राष्ट्र के लिए संकट बनकर खड़ी हो जाती है। इस यौवन के वरदान के प्रसंग में उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द का यह वचन सदा प्रेरणा देता रहेगा जवानी जोश है, बल है, साहस है, दया है, आत्मविश्वास है, गौरव है वह सब कुछ हैं जो जीवन को पवित्र, उज्जवल और पवित्र बना देता है। आज राष्ट्र का गौरव बढ़े, इसके लिए हमें युवकों को चरित्रवान बनाना होगा। युवकों के चरित्र को गौरवमय बनाने के लिए उनके चरित्र में भारतीय संस्कृति का दिव्य प्रकाश होना चाहिए।

इस अवसर पर 16 प्रतियोगियों ने भाग लिया जिसमें पोस्टर मैंकिंग में 8, गायन प्रतियोगिता में 5 और भाषण प्रतियोगिता में 3 प्रतियोगियों ने भाग लिया। इस अवसर पर शुशान्त ने पोस्टर मैकिंग में पहला, हिमांशु ने दूसरा और क्रिस्टी ने तीसरा स्थान प्राप्त किया।

इस समारोह में निर्णायकों की भूमिका डाक्टर रेणुका मुखोपाध्याय और डाक्टर सीमा अरोडा ने बखूबी निभाई। मंच संचालन की भूमिका ममता रतरा ने बखूबी से निभाई। इस अवसर पर प्रोग्राम की संचालिका श्रीमती कमलेश शर्मा ने श्रोताओं का धन्यवाद किया और कहा कि आर्य कालेज ऐसे समारोहों का आयोजन करता रहेगा।

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रैस, मण्डी रोड जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। E-mail: apspunjab2010@gmail.com, www.aryapratinidhisabha.org
आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।